चाहे लक्ष्य, अनचाहे परिणामः औपनिवेशिक उत्तर भारत में स्त्री शिक्षा और पढ़ने का भय

चारु गुप्ता

दिल्ली विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर और चर्चित इतिहासकार चारु गुप्ता का तद्‌भव के लिए यह दूसरा लेख है।

औपनिवेशिक उत्तर भारत में हिन्दू नवजागरण सुधारकों और विचारकों के लिए महिलाओं की शिक्षा का सवाल प्रमुख था। पर यह उल्लेखनीय है कि महिलाओं के लिए शिक्षा की जरूरत किस भाषा, किस तर्क या किस बोली में अभिव्यक्त की गयी। बेहतर पत्नी और मां के निर्माण में मदद करने के लिए महिला शिक्षा एक मध्यवर्गीय हिन्दू पहचान और सभ्यता निर्मित करने वाले एक नैतिक कर्म के रूप में सामने आयी। स्त्री शिक्षा एक राष्ट्रीय निवेश था, जिसका मकसद उन्हें एक अच्छी गृहणी और अपने विवाहित जीवन में एक उत्तम और ज्ञानवान सहचरी बनाना था। इस लेख में हम देखेंगे कि हिन्दी सुधारकों ने महिलाओं के लिए किस प्रकार की शिक्षा का आदर्श सामने रखा, उसमें क्या कमियां थीं और इस सबके बीच महिलाओं ने कैसे अपनी जगह बनायी।

उन्नीसवीं शताब्दी की शुरुआत में पूरे उत्तर प्रदेश में शायद ही ढंग का कोई कन्या विद्यालय था और स्त्रियों को आमतौर पर घर पर ही अनौपचारिक ढंग से शिक्षा दी जाती थी, जिसे वरिष्ठ परिजन या कई बार कुछ पढ़ी लिखी, पर गैरपेशेवर, पंडिताइनें संचालित करती थीं।[1] हिन्दू स्त्रियों को औपचारिक शिक्षा देने का अभियान व्यवस्थित रूप से पहली बार इसाई मिशनरियों ने शुरू किया। भारतीय स्त्रियों की दुर्गति और उपेक्षा पर उन्होंने अपने हित के लिए गहरे रूप से प्रकाश डाला और उनके द्वारा दी जा रही शिक्षा को हिन्दू धर्म की बुराइयों और विसंगतियों के बोझ से उबरने का प्रथम चरण कहा। मिशनरी प्रवर्तकों ने घरों के अंदर के जनानखाने को अंधकार, गंदगी और बदनसीबी का एबसे बड़ा कारक माना। जनाना मिशन जैसे अभियान भारत की स्त्रियों की मुक्ति, और उन्हें सभ्यता प्रदान करने की प्रथम आहट के तौर पर शुरू किये गये।[2] महिला जनानखाने के बारे में कहा गया : *“जनानखाने की*

नीरस और सुनसान दुनिया में न तो कोई किताब, और न ही लेखन सामग्री या कसीदाकारी दिखायी देती है अंग्रेज स्त्रियों के आंतरिक कक्षों में मौजूद सभ्यता के अनगिनत उपादानों में से कुछ भी तो यहां दिखायी नहीं देता।" [3]

मिशनरियों का मानना था कि ऐसी स्त्रियों तक पहुंच बनाने के लिए कोई न कोई तो रास्ता ढूंढना ही होगा : *"पुरुषों से अलग रखी गयी स्त्रियों के पास पहुंचने का रास्ता स्त्रियों को ही बनाना होगा, और यदि दीक्षित मिशनरी मुक्ति के सुसमाचारों से अभिभूत होकर ऐसी पहल करने में असहज महसूस करता है तो सिस्टर मिशनरी को आगे किया जाना चाहिए– हाथों में और होठों पर ईश्वरीय संदेशों को साथ लिए वे इन दुखियारी स्त्रियों के पास जायें और बतायें कि जीवन और मुक्ति के द्वार उनके लिए भी निःशुल्क तथा बिना किसी रोक टोक के खुले और उपलब्ध हैं।"* [4]

दूसरी ओर हिन्दू सुधारक मिशनरियों तथा पश्चिमी शिक्षा से बेहद आशंकित रहते थे, खासतौर से स्त्रियों के संदर्भ में। उन्हें विभिन्न जातियों के मेलजोल और अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव से स्त्रियों के 'मेम' बन जाने का भय था। इसी कारण जनाना मिशन के नाम पर वे मिशनरी स्त्रियों के अपने घरों में आने जाने की छूट मिल जाने को लेकर काफी चिन्तित रहते थे, और शिक्षा की आड़ में इसाई धर्म प्रचार/धर्मान्तरण का अंदेशा उनके मनों में निरंतर बना रहता था।[5] हिन्दू स्त्रियों के धर्मान्तरण के इक्का दुक्का मामलों की उग्र प्रतिक्रिया सामने आयी, हालांकि ऐसा करने के लिए उन पर किसी तरह का दबाव डालने के अधिक प्रमाण नहीं मिलते। उदाहरण के लिए 1898 में इलाहाबाद की एक कायस्थ कन्या को घर जाकर पढ़ाने वाली मिशनरी स्त्री ने उसे घरबार छोड़ कर इसाई बन जाने के लिए प्रेरित किया, जिसके लिए कन्या स्वेच्छा से राजी हो गयी। पर ऐन वक्त पर परिवार के हस्तक्षेप के कारण यह प्रकरण सफल नहीं हो पाया।[6] कई मायनों में यह माना जाने लगा कि इसाई धर्म हिन्दू धार्मिक संस्कृति और सामाजिक संस्थाओं को अंग्रेजी राज से ज्यादा गम्भीर चुनौती दे रहा था।[7]

यह कहा गया कि पारिवारिक मूल्यों की बलि देकर और लैंगिक श्रेणीबद्धता को ध्वस्त करके हासिल की जाने वाली शिक्षा सार्थक नहीं हो सकती। हिन्दू पुरुषों का पक्ष पस्तुत करते हुए एक पत्र ने लिखा : *"हम अपनी स्त्रियों को शिक्षित देखना तो चाहते हैं पर यदि शिक्षा का अर्थ उनका अपने मनमाफिक लोगों के साथ मनमाना मेलजोल बढ़ाना, ज्ञान में वृद्धि के साथ नैतिकता का ह्रास जुड़ जाना, हमारे सम्मान का अवमूल्यन और घरों के अंदर की निजता का हनन होना हो जाये तो हम अपनी स्त्रियों को शिक्षित करने के बजाय अपना सम्मान संजो कर रखना चाहेंगे– चाहे इसके लिए हमें हठधर्मी, पूर्वाग्रही या सिरफिरा ही क्यों न कहा जाये।"* [8]

1909 के आसपास उत्तर प्रदेश के अनेक शहरों में स्त्री शिक्षा के विरोध में प्रतिक्रियाएं देखने में आयीं, हालांकि शुरू में उत्साह दिखाया गया था, भले ही वह दिखावे के लिए रहा हो। सार्वजनिक तौर पर स्त्री शिक्षण का तो स्वागत किया गया पर इसका अंदरूनी विरोध कायम रहा। बनारस में स्त्री शिक्षा को लेकर कोई हलचल नहीं थी, इलाहाबाद में उदासीनता दिखी, गोरखपुर में प्रतिकूल प्रतिक्रियाएं सामने आयीं और लखनऊ में खुले तौर पर उग्र विरोध सामने आया।[9]

लेकिन साथ ही, उत्तर प्रदेश के हिन्दू अपनी शालीन और सुसंस्कृत छवि बनाना चाहते थे। मध्यवर्गीय हिन्दू अस्मिता और सभ्यता के लिए स्त्री शिक्षा एक नैतिक अनिवार्यता बनती जा रही थी। स्त्रियों को विवाह सम्बंधों में एक अनुकूल और प्रबुद्ध संगिनी की भूमिका निभाने पर जोर दिया जा रहा था जिसके लिए थोड़ी शिक्षा अनिवार्य मानी गयी। राष्ट्रीय आंदोलन में भी उनकी और अधिक सक्रिय भूमिका के लिए शिक्षा जरूरी थी। यह माना गया कि हिन्दू परिवार की खुशियां तभी बढ़ेंगी जब स्त्रियां थोड़ी शिक्षित होंगी। लेकिन साथ ही अधिक पढ़ी लिखी स्त्रियों की सकारात्मक भूमिका पर भी उंगली उठायी जाने लगी। पारिवारिक और सामाजिक खामियों के लिए मुख्य रूप से स्त्रियों को दोषी माना जा रहा था। साथ ही यह कहा जा रहा था कि स्त्रियां पारिवारिक जीवन की केन्द्रीय

tadbhav.com home page

शक्ति थीं, उन्हीं में वे सभी गुण समाहित थे जिससे परिवार के अंदरूनी ढांचे का संरक्षण किया जा सके।[10] उत्तर प्रदेश के एक नामचीन वकील बिशन नारायण धर ने लिखा : *"स्त्रियों को शिक्षित करने से केवल घरेलू शांति और सद्भाव ही नहीं उत्पन्न होगा, बल्कि ज्ञान की प्रेरक शक्ति से आनंद के नये द्वार भी खुलेंगे– स्त्रियों के साथ मिलने वाले परिष्कृत और शुद्ध सुख, स्त्रियोचित स्नेह और करुणा से ओतप्रोत सामाजिक उन्नयन के विस्तृत मार्ग भी प्रशस्त होंगे।"* [11]

उत्तर प्रदेश के हिन्दुओं की कोशिश थी कि महिला शिक्षा की एक ऐसी प्रणाली विकसित की जाये जिसमें पूर्वी और पश्चिमी संस्कृतियों का सहज समन्वय हो। वे चाहते थे कि आदर्श, पारम्परिक और आर्य स्त्रियों को आधुनिकता, सभ्यता और पश्चिमी ज्ञान से भी कुछ हद तक लैस किया जाये।[12] साथ ही उन्हें आदर्श से ओतप्रोत ऐसी व्यवस्था को अपनाना था जिसका स्थान उनकी निगाह में ऊंचा था। मदन मोहन मालवीय ने इस बात पर बल दिया कि स्त्रियों की शिक्षा में अतीत और वर्तमान की स्त्रियों के सर्वश्रेष्ठ पक्षों का समावेश होना चाहिए जिससे उन्हें भविष्य में नये भारत के निर्माण में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लेने के लिए प्रेरणा मिले।[13] लेकिन इस तरह के तर्कों में एक महत्वपूर्ण अंतर्विरोध छुपा हुआ था। एक छोर पर था, भारतीय स्त्रीत्व का पारम्परिक आदर्श और दूसरे छोर पर था, शिक्षा का आधुनिक आदर्श, और इनका समन्वय कर पाना सुधारकों के लिए कठिन था।[14] तत्कालीन व्यवस्था के अंतर्गत आर्य, आधुनिक और शिक्षित मातृत्व का सम्मिश्रण होना सफल नहीं हो सकता था। स्कूलों में सरकार द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम पढ़ाना सरकारी अनुदान प्राप्त करने की अनिवार्यता थी, पर आर्य माताओं की नयी पीढ़ी विकसित करने की नीयत से अन्य विषयों को भी साथ साथ पढ़ाने की मुहिम चलायी जा रही थी। महिला शिक्षा में विशेषकर आधुनिक जीवन, सभ्यता और प्रौद्योगिकी के साथ साथ पारम्परिक हिन्दुत्व का घालमेल आवश्यक माना जा रहा था क्योंकि यह पश्चिमी अंध आधुनिकता को एक चुनौती दे सकता था। पुरुषों पर आधुनिक शिक्षा का बुरा प्रभाव पड़ा है– ऐसा मान कर कहा गया कि स्त्रियों को इससे खासकर दूर रखना चाहिए। एक सुधारक ने लिखा : *"स्कूल के लड़के लड़कियों को देखो तो हड्डी निकली हुई है, आंखें भीतर घुसी हुई हैं, चश्मा भी लग रहा है... हाथ से कोई काम करना तो उन्हें पहाड़ ही मालूम होता है... नयी शिक्षा की रीती ही बुरी है।"* [15]

इसके साथ ही इस बात पर जोर दिया गया कि चाहे पुरुषों ने पश्चिमी पोशाक और संस्कृति को शिक्षा के कारण अपना लिया था, हिन्दू महिलाओं ने यहां की संस्कृति और धरोहर को संभाल कर रखा था। एक लेखक ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये : *"जब यह देखने में आता है कि स्त्रियों का भी उसी सदोष शिक्षा प्रणाली से पाला पड़ता है तब स्त्री शिक्षा पर विचार करने वालों का चित्त व्यथित हुए बिना नहीं रहता। जातीयता का अभाव, मातृभाषा के प्रति तिरस्कार इत्यादि दोष स्त्रियों में नहीं पाये जाते।"* [16]

यह भी गौर करने का विषय है कि न केवल हिन्दू समाज सुधारक बल्कि कई ब्रिटिश अधिकारी, पाठ्य पुस्तकों के लेखक तथा सरकारी पाठ्यक्रम बनाने वाले अधिकारी भी उपर्युक्त विचारों के प्रभाव में थे। वे यह मानते थे कि आर्य स्त्रीत्व के कथित आदर्शों को बनाये रखना चाहिए और शिक्षा के द्वारा उन्हें और मजबूत करना चाहिए।

औपनिवेशिक काल की सच्चाई यह है कि स्त्रियों की शिक्षा के मामले में उत्तर प्रदेश देश के सबसे पिछड़े इलाकों में से था। परदा प्रथा, बाल विवाह और आर्थिक विपन्नता इस पिछड़ेपन के प्रमुख कारण थे। 1860-61 में यहां पर कन्याओं के पंद्रह विद्यालय थे जिसमें 260 छात्राएं पढ़ती थीं,[17] हालांकि धीरे धीरे औपचारिक शिक्षा प्राप्त करने वाली कन्याओं की संख्या उत्तर प्रदेश में बढ़ती गयी। 1886-87 में उनकी संख्या 500 प्रतिशत से भी ज्यादा बढ़ कर 13,116 तक पहुंच गयी और 1916-17 में यह संख्या बढ़ कर 70,712 हो गयी। इस गणना में सरकारी शिक्षण संस्थाएं (विश्वविद्यालय, माध्यमिक तथा प्राथमिक) और निजी संस्थाएं (उच्च एवं प्रारम्भिक) शामिल हैं।[18] 1937-38 तक छात्राओं की

tadbhav.com home page

संख्या बढ़ कर 1,44,998 तक पहुंच गयी, जिसमें सबसे आगे रहीं ऊंची जातियों की हिन्दू कन्याएं। शहरी मध्यवर्गीय कन्या के जीवन में किसी प्रकार के स्कूल में दाखिला लेना एक सर्वमान्य मूल्य की तरह स्थापित होने लगा था।[19]

हिन्दुओं ने स्त्री शिक्षा के विकास के लिए दोतरफा रणनीति अपनायी। एक, सरकारी नियम कायदों का पालन करने वाले आर्यसमाजी विद्यालयों की स्थापना, और दो, व्यापक तौर पर सनातन धर्म के आदर्शों का अनुसरण करने वाले नव हिन्दुत्ववादी विद्यालयों का विकास। पहली श्रेणी के विद्यालयों में देहरादून का कन्या गुरुकुल अग्रणी था। अन्य महत्वपूर्ण संस्थाएं थीं– हरदोई की आर्य कन्या पाठशाला, मेरठ की कन्या पाठशाला तथा गाजियाबाद की वैदिक कन्या पाठशाला। दूसरी श्रेणी के विद्यालयों में सर्वप्रमुख था बनारस का एनी बेसेन्ट हिन्दू कन्या विद्यालय, जो हिन्दू सेण्ट्रल कॉलेज का एक अंग था। इसमें पढ़ने वाली सभी छात्राएं ब्राह्मण परिवारों की ही थीं। पर शुद्ध शैक्षणिक मानदंडों से परखने पर यह विद्यालय निराश करने वाला था।

हिन्दुओं ने पुरुष शिक्षण से अलग एक नयी स्त्री शिक्षण प्रणाली विकसित करने का प्रयास किया जो कि पश्चिमी शैक्षणिक प्रतिमानों का अनुसरण नहीं करती थी। यह कहा गया कि यहां की जरूरतें भिन्न हैं और साथ ही पश्चिमी शिक्षा के तथाकथित दोषों को भी उजागर किया गया। एनी बेसेन्ट ने इस संदर्भ में लिखा : *"स्त्री शिक्षा के राष्ट्रीय अभियान को वास्तविक अर्थों में राष्ट्रीय स्तर का होना चाहिए। इसमें स्त्रियों की भूमिका की प्राचीन हिन्दू धारणा का समावेश होना चाहिए, न कि अधकचरे आधुनिक विचारों का। इसमें स्त्रियों को सार्वजनिक रोजगार के अवसरों के संदर्भ में पुरुषों का प्रतिद्वंद्वी और विरोधी नहीं माना जाना चाहिए। पश्चिमी समाजों में प्रचलित भिन्न आर्थिक परिदृश्यों में यह निरंतर देखने में आ रहा है। भारत को शालीन तौर तरीकों वाली शिक्षित पत्नियों और माताओं की, बुद्धिमती व स्नेही गृहणियों की, बच्चों को पढ़ाने वाली शिक्षित शिक्षिकाओं की, पतियों को उचित परामर्श देने वाली सहगामिनियों की और बीमारों की तीमारदारी करने वाली सुयोग्य नर्सों की आवश्यकता है, न कि वैसी स्त्री स्नातकों की जो केवल बाहरी कामकाज के लिए उपयोगी हों।"* [20]

अपने देश ब्रिटेन के स्त्री आंदोलनों से भयभीत अनेक अंग्रेज अधिकारी उत्तर प्रदेश के सुधारकों के इस दृष्टिकोण के प्रति सहानुभूति तथा स्वीकृति का नजरिया रखते थे और उनके विचारों में यह रूढ़िवादिता स्पष्ट तौर पर दिखती भी थी। प्रदेश के तत्कालीन शिक्षा निदेशक हच.बी. बटलर का मानना था कि लड़कियों की शिक्षा को लड़कों की शिक्षा का अंधानुकरण नहीं करना चाहिए, और न ही इनमें परीक्षाओं की भरमार होनी चाहिए।[21] उत्तर प्रदेश के शिक्षा निदेशक मैकेनजी ने भी जोर देकर कहा कि भारतीय लड़कियों को लड़कों की प्रतिलिपि के तौर पर विकसित नहीं किया जाना चाहिए, और न ही इन्हें पश्चिमी लड़कियों की प्रतिलिपि ही बनाना चाहिए। उन्होंने लड़कियों के लिए ऐसे पाठ्यक्रम बनाने पर जोर दिया जिससे भारतीय स्त्रीत्व के सर्वश्रेष्ठ गुण निखर कर सामने आयें।[22] यह भी माना गया कि स्त्रीत्व के प्राचीन आदर्शों को गौरवान्वित करने के बदले हिन्दू समाज यदि राष्ट्रीय विशिष्टताओं से रहित पश्चिमी कैरिकेचर को प्रोत्साहित करेगा तो अपनी चमक दमक और सम्मोहन का ह्रास की करेगा। उत्तर प्रदेश में इसाई मिशनरियों द्वारा स्थापित स्त्री शिक्षा के मानदंड हिन्दुओं द्वारा स्थापित आदर्शों से ज्यादा भिन्न नहीं थे– बस, धार्मिक शिक्षाएं अलहदा थीं। मिशनरियों ने यही कहा : *"कन्या विद्यालय अपनी स्थापना के लक्ष्य तब तक प्राप्त नहीं कर सकते जब तक वहां प्रवीणता/दक्षता का अध्यापन पारिवारिक जरूरतों को ध्यान में रख कर न किया जाये... सहज स्वाभाविक हुनर के रूप में स्वीकार कर युवा होती कन्याओं को बीमारों की तीमारदारी और फर्स्ट एड में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। परिवार के रखरखाव के लिए घरेलू अर्थशास्त्र महिलाओं के लिए एक बहूमूल्य साधन हो सकता है और इससे पारिवारिक मामलों का ठीक और अच्छा प्रबंधन किया जा सकता है। सम्भव है बाहर फरिश्ता मानी जाने वाली युवा स्त्रियां घर के अंदर कर्कशा के रूप में देखी जाती हों।*

tadbhav.com home page

इसका कारण यह हो सकता है कि विद्यालयों में सहपाठियों के साथ संयमित और निःस्वार्थ बर्ताव करने की दीक्षा उन्हें नहीं दी गयी। [23]

उत्तर प्रदेश में स्त्री शिक्षा की विफलता का एक बड़ा कारण पाठ्यक्रम की अनुपयुक्ता को माना गया। शिक्षा विभाग का मत था कि स्त्री शिक्षा गणित के बोझ से बोझिल हो गयी थी और इसमें घरेलू विज्ञान का अभाव था। 1915 में लड़कियों को पढ़ाये जाने वाले देसी पाठ्यक्रम का संशोधन करने के लिए एक समिति का गठन किया गया जिसने मुख्य तौर पर गणित के पाठों को सरलीकृत करने तथा निम्न माध्यमिक कक्षाओं में घरेलू विज्ञान को अनिवार्य विषय के तौर पर पढ़ाने के सुझाव दिये।[24] यों तो सरकार स्त्री शिक्षा के प्रति गम्भीर चिन्ताएं जाहिर करती थी, पर वास्तव में इसके लिए पर्याप्त राशि का आवंटन करने में हीलाहवाला करती थी। इसलिए कन्या विद्यालयों में संसाधनों और प्रशिक्षित शिक्षिकाओं की बड़ी कमी हमेशा देखने में आती थी। तुलनात्मक रूप में लड़कों के विद्यालयों की दशा संसाधनों और शिक्षकों के मामले में काफी अच्छी थी।[25]

हिन्दुओं को निरंतर यह चिन्ता सता रही थी कि स्त्रियां शिक्षित होते ही, विशेषकर अंग्रेजी शिक्षा पाते ही, पश्चिमी जीवन शैली का अनुकरण करने लगती हैं। हिन्दू महिला सुधारकों ने भी यह चिन्ता व्यक्त कीः *"खासकर जिन स्कूलों में अंग्रेजी की शिक्षा दी जाती है वहां की छात्राएं तो अपने में सादगी का अनुभव करना कम पसंद करती हैं... उनमें एक प्रकार से चटक मटक कर रहने की विशेष आदत पड़ जाती है... इस समय गर्ल्स स्कूलों में सबसे अधिक आवश्यकता है सादगी का प्रचार करना... अंग्रेजी और पश्चिमी शिक्षा के प्रभाव से बचने के लिए उनकी धर्मशिक्षा का विशेष प्रबंध होना चाहिए। उनके सामने भारत के प्राचीन गौरव का आदर्श रखना चाहिए।"* [26]

एक अन्य अखबार ने कहा : *"इन अंग्रेजी नवशिक्षित महिलाओं ने परम पवित्र विवाह बंधन को एक साधारण खिलवाड़ समझ लिया है। जैसे कोई व्यक्ति किसी ऑफिस में नौकरी करता है उसी प्रकार इन नवशिक्षित महिलाओं की समझ में स्त्री भी मानो पति की नौकरी करती है कि वह अपने पति से खाना कपड़ा और खर्च पाया करें; जब उसकी इच्छा हुई कुछ दिन की कासुअल लीव ले ली... खेद की बात है कि अंग्रेजी शिक्षा ने ऐसा खराब असर महिलाओं के दिलों पर कर दिया है।"* [27]

और एक अन्य प्रकाशन ने पश्चिमी शिक्षा के महिलाओं पर भयंकर असर को दर्शाते हुए व्यंगात्मक रूप में लिखा : *"यदि विचार कर देखा जाये तो अनाधिकार स्त्री शिक्षण, युवती विवाह और स्त्री स्वतंत्रता– ये तीनों ही हिन्दू समाज के लिए विष हैं... हिन्दू समाज में इनके द्वारा जिस भीषण भविष्य की सम्भावना है इसे हम दर्शाना चाहते हैं...*

पश्चिमी दृश्यः सभ्य बीवी की चिट्ठीः

सीखे मैंने डांसिंग ढंग, और सिंगिंग है इसके संग,
बस अब देख दिखलाऊंगी, और सीखूं सिखलाऊंगी,
सदा सुंदर तितली बन कर, उड़ूंगी फूलों फूलों पर,
कभी थियेटर मैं जाऊंगी फूल तुर्रे ले आऊंगी।[28]

एक और उदाहरण देखिये। एक गीत संकलन ने लिखा :

मैं अंग्रेजी पढ़ गयी, नहीं पर्दे में रहने की...
गेंद खेलने को जाऊंगी, मर्दों में जी बहलाऊंगी...
पति अंग्रजीदां जवान हो, क्रिस्तान या मुसलमान हो।[29]

इस प्रकार आधुनिक, अंग्रेजी और पश्चिमी शिक्षा को कई बुराइयों का द्योतक माना गया, विशेषकर महिला शिक्षा के संदर्भ में। सुधारवादियों को यह खतरा भी लगातार लग रहा था कि अधिक शिक्षा पाने पर महिलाएं अपने घर के चैन, पति के सुख और बच्चों को तिलांजलि दे देंगी। चांद कार्यालय ने अपने विभिन्न प्रकाशनों में और एक कार्टून संकलन में इस विषय पर कई कार्टून छापे।

एक कार्टून में दिखाया गया कि एक शिक्षित महिला अपने पति पर गुस्सा हो रही है। वो कुर्सी पर बैठी है और पति चाय लेकर खड़ा है। लिखा था : *"देवी जी के लिए पति देवता स्वयं चाय बना कर लाये हैं, देवी जी का आज मिन्टोपार्क में 'गृहस्थ्य सुख' पर एक महत्वपूर्ण व्याख्यान होने वाला था। चाय की देरी के कारण... 5 मिनट की देरी हो गयी– पति देवता पर बहुत बिगड़ रही हैं!!"*

एक अन्य कार्टून में शिक्षित पत्नी टेबल पर बैठी भाषण लिख रही है और पति बच्चे को खड़े होकर सुला रहा है। लिखा है : *"देवी जी स्त्रियों की वर्तमान दशा पर एक जबरदस्त नोट लिख रही हैं और पति देवता बाहर बच्चा खिला रहे हैं! जो यह स्वाभाविक दृश्य देख कर हंसे, खुदा करे उसको बीवी भी ऐसी फुलझड़ी जैसी मिले!!"* [30]

स्पष्ट था कि सुधारकों के अनुसार महिला शिक्षा एक सीमा में ही होनी चाहिए और महिलाओं को अपने घर का सारा काम स्वयं करना चाहिए। शिक्षा का अर्थ यह नहीं है कि पति चाय पिलाये या बच्चे को देखे! इसके साथ साथ प्राचीन भारत को ऐसे युग के रूप में चित्रित किया गया जिसमें शिक्षित स्त्रियों की भरमार थी। इसी मॉडल को अंगीकार करने की बात बराबर कही जा रही थी।[31] अनेक स्तरों पर, जैसे कथा, कहानियों, निबंधों और उपदेशात्मक आख्यानों में, शिक्षित स्त्री पर आदर्शवादी हिन्दू पत्नी और पश्चिमी चाल ढाल में ढली, अंग्रेजी पढ़ी हुई स्त्री पर धार्मिक शिक्षा पायी स्त्री विजयी बन कर उभर रही थी।[32] काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने भी स्त्रियों से अंग्रेजी उपन्यासों का परित्याग करके *हिन्दू गृहस्थी, आदर्श दम्पति* तथा *सती चरित्र संग्रह* जैसी पुस्तकें पढ़ने का आग्रह किया।[33] इस बात पर जोर दिया गया कि महिलाओं के लिए सबसे महत्वपूर्ण धार्मिक और नैतिक शिक्षा है, इसमें भी विशेषकर *महाभारत, रामायण* और *मनुस्मृति* को अनिवार्य रूप से शामिल किया गया। एक विशेष प्रकार की वैज्ञानिक शिक्षा भी इसमें शामिल थी। महिलाओं को गृहविज्ञान में प्रशिक्षित करना था, जैसे साफ सफाई के नियम, घर की देखभाल, खाद्य पदार्थों का महत्व, घरेलू प्रबंध, बुनियादी अकाउंट की जानकारी, स्वच्छता, रसोई, सिलाई बुनाई आदि। नारी शिक्षा का आदर्श प्रस्तुत करते हुए एक लेखक ने कहा : *"वर्तमान समय में नारी शिक्षा के लिए खूब बहसें हो रही हैं। इस समय तीन मत के लोग अपनी अपनी गा रहे हैं। पहला तो यह है कि नारियों को खूब ऊंची शिक्षा देनी चाहिए। अर्थात पुरुषों की तरह उन्हें भी बी.ए., एम.ए. की डिग्री दिलानी चाहिए। दूसरे कहते हैं कि नारियों को शिक्षा ही न देनी चाहिए। तीसरे कहते हैं कि हमें अपने भारत की स्थिति के लायक शिक्षा देनी चाहिए... मेरे मत से अंतिम ही शिक्षा उत्तम है... नारियों को मध्यम श्रेणी ही की शिक्षा देनी चाहिए। उन्हें अपने भारतीय ग्रंथ पढ़ाने चाहिए, धर्म की पुस्तकें पढ़ानी चाहिए, पतिव्रत धर्म क्या है, इसे समझाना चाहिए। इसके बाद उन्हें गृहस्थ्य धर्म की पुस्तकें, जैसे पाकशास्त्र, बच्चों के पालन की रीति, पति कुटुम्ब सेवा, सीना पिरोना, पतिव्रत धर्म, अतिथि सेवा, गृह प्रबंध आदि की पुस्तकें पढ़ानी चाहिए। जब इन ग्रंथों का वह अध्ययन कर चुकें तो उस समय से उन्हें उपनिषद, गीता आदि महत्व की पुस्तकें पढ़ानी चाहिए। मेरी समझ से भारतीय कुल महिलाओं के लिए इतना ही यथेष्ट है।"* [34]

हिन्दू स्त्रियों को यह आदेश भी दिया गया कि वे अंग्रेजी और यहां तक कि उर्दू का भी परित्याग कर दें और हिन्दी पढ़ें।[35] सबसे जरूरी यह था कि उनका साहित्यिक ज्ञान पर्याप्त स्तर तक पहुंचे जिससे वे 'अपने पतियों द्वारा महान लेखकों की रचनाओं को पढ़ कर सुनाने पर पूरा ध्यानमग्न होकर इसका रसास्वादन कर सकें।'[36] स्त्री शिक्षा इसलिए जरूरी मानी जा रही थी क्योंकि इसमें ऐसी विलक्षण क्षमता थी कि वह चाहे तो पतियों का उद्धार कर दे या उनकी प्रगति को धराशायी कर दे, वैसे ही जैसे माताएं अपने बच्चों का भविष्य चाहें तो बना दें या बिगाड़ डालें।[37] यह कहा गया कि : *"घर ही हमारा शिक्षालय है और गृहणी उसमें सरस्वती रूप में शिक्षा देने वाली विराजमान है... घर ही धर्म मंदिर है जिसमें भिन्न भिन्न प्रकार के धर्मकार्य होते रहते हैं। घर एक प्रकार का छोटा सा राज्य है, जिसकी अधीश्वरी गृहणी है और जिसकी प्रजा उसकी संतान है... विद्या पढ़ने का मुख्य उद्देश्य*

tadbhav.com home page

धर्माचर की वृद्धि है।" [38]

एक अन्य पुस्तिका ने लिखा : *"विद्या पढ़ाने का अभिप्राय साक्षर बनाने से नहीं है, बल्कि योग्य बनाने से है... हमारी शिक्षा का यह अर्थ नहीं कि हमारी बहनें बी.ए., एम.ए. की डिग्रियां प्राप्त कर भोग, विलास और मनोरंजन की सामग्रियों का उपयोग करें। हमारी शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य तो त्याग, बलिदान और आत्मोसर्ग है।"* [39]

देहरादून के कन्या गुरुकुल में केवल शिक्षिकाओं की नियुक्ति की गयी, वहां की छात्राओं को खादी के वस्त्रों को ही पहनने की अनिवार्यता थी। आमतौर पर प्रचलित पाठ्यक्रम से पृथक छात्राओं के लिए अलग पाठ्यक्रम बनाया गया था। जैसे लड़कों को जीवन संघर्ष में विजयी होने के लिए विज्ञान अनिवार्य तौर पर पढ़ाया जाता था, उसी प्रकार लड़कियों को धार्मिक साहित्य पढ़ाया जाता था। जिससे वे घरों के अंदर प्रेम का विशेष लक्ष्य प्राप्त कर सकें। दिनभर का हिसाब किताब रखने के उद्देश्य से उन्हें कामचलाऊ गणित पढ़ाने की जरूरत समझी गयी। भूतप्रेत के किस्सों से बचाव करने के उद्देश्य से थोड़ा बहुत विज्ञान पढ़ाना भी लाजिमी माना गया और साथ में इतिहास का विस्तृत ज्ञान उनके लिए आवश्यक समझा गया।[40] उदाहरण के लिए कहा गया कि उन्हें सीता और प्राचीन हिन्दू अतीत के बारे में जरूर पता होना चाहिए। एक अदर्श हिन्दू नारी की छवि के लिए ऐसी पुस्तकें पढ़ना श्रेयस्कर था।[41]

ऐसे में लड़के और लड़कियों के लिए पृथक विद्यालय तथा शिक्षण पर जोर देने वाली सूचना, ज्ञान तथा पाठ्यक्रम की श्रेणीबद्धता निर्मित की गयी, उन्हें वैधानिक मान्यता दी गयी और उसे पोषित किया गया। स्पष्ट तौर पर विभाजक रेखा खींची गयी– स्त्रियों को हृदय और संवेदनाओं का प्रतीक माना गया, तो पुरुषों को मस्तिष्क और बुद्धि का।[42] महावीर प्रसाद द्विवेदी ने स्पष्ट किया : *"स्त्रियों के कर्त्तव्य कार्य पुरुषों के कार्यों से कुछ भिन्न अवश्य हैं। अतैव उनकी शिक्षा भी, उनकी स्थिति और उनके कर्त्तव्य के अनुसार, कुछ भिन्न अवश्य होनी चाहिए... आचार्यों की आज्ञा के अनुसार पति सेवा और संतान पालन स्त्रियों का प्रधान पारिवारिक कार्य है। पुरुष का काम अर्जन और स्त्री का काम रक्षण है।"* [43]

पुरुषों के कार्य क्षेत्र में समाज में समाहित धर्मशास्त्र, कानून व चिकित्सा जैसे विषयों को महत्व दिया गया, जबकि स्त्रियों की दुनिया में बच्चों का लालन पालन, पाकशास्त्र और सफाई जैसे कम महत्वपूर्ण विषयों का वर्चस्व रहा। बड़े मुखर तौर पर स्त्रियों के लिए उपदेशात्मक साहित्य ही अधिक रचा जा रहा था। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि महिला शिक्षा के अलावा शिक्षा के किसी और क्षेत्र में इतना नैतिक जाप, शुद्ध चरित्र और सदाचारी होने का आग्रह नहीं रहा।

लेकिन क्या यहां पर हम अपनी बात समाप्त कर सकते हैं? क्या यहां पर विराम लगाने का अर्थ यह नहीं है कि हम केवल स्त्री शिक्षा के नकारात्मक पहलुओं की ओर देख रहे हैं? क्या शिक्षा का उपयोग महिलाओं के लिए केवल यही था कि वे एक पतिव्रता स्त्री, सुघड़ गृहणी और समझदार मां बन कर ही सामने आयें? क्या शिक्षा का मुख्य परिणाम यह हुआ कि महिलाओं पर अंकुश बना रहा और उन्हें दोयम दर्जे की भूमिका से ही संतोष करना पड़ा? ऐसा करने से हम केवल शिक्षा की सीमाओं पर ही प्रकाश डाल पायेंगे। शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं के लिए सीमित अवसरों और शिक्षा की प्रभुत्वकारी भूमिका पर बात करना काफी नहीं है। स्त्री शिक्षा पर किया जाने वाला कोई भी अध्ययन तब तक सम्पूर्ण नहीं माना जा सकता जब तक औपचारिक तौर पर उपलब्ध साहित्य और लिखे छपे पाठों से आगे बढ़ कर न देखा जाये। साथ ही यह देखना आवश्यक है कि महिलाओं ने उन्हें दी जाने वाली शिक्षा का क्या किया।

गौरतलब है कि बनारस की कुछ उच्चवर्णी विधवा स्त्रियों ने शिक्षा के हथियारों से लैस होकर वैधव्य की पारम्परिक छवियों का खंडन मंडन किया और कड़ी पाबंदियों के बीच भी कुछ फेरबदल

tadbhav.com home page

करके अपने लिए अनुकूल माहौल बनाने का प्रयास किया।[44] अनेक विद्वानों ने दिखाया है कि बीसवीं शताब्दी के शुरुआती दौर में उत्तर प्रदेश में कैसे अनेक मध्यवर्गीय हिन्दू स्त्रियां प्रकाशित होने वाले साहित्य में भागीदारी करने लगी थीं और उनकी अलग पहचान भी उभरने लगी थी। स्त्रियों की अपनी पत्रिकाएं, प्रेस और लेखिकाएं थीं। कई मध्यवर्गीय हिन्दू महिलाएं सार्वजनिक क्षेत्र में अपनी पृथक पहचान बनाने लगी थीं और उनके द्वारा प्रयोग की जाने वाली भाषा और विचारों पर भृकुटियां भी तनने लगी थीं। सार्वजनिक क्षेत्र में महिलाओं द्वारा लेखन कार्य में कई तरह की रुकावटें और विरोध के स्वर थे। इसीलिए महिलाओं द्वारा रचित साहित्य का स्वरूप भी धीरे धीरे सुधारवादी ढांचे में ढलने लगा। स्त्रियों की पत्रिकाएं काफी हद तक मध्यवर्गीय आचार संहिता के प्रचार प्रसार का माध्यम बनने लगीं, हालांकि स्त्रियों के संदर्भ में उन्होंने अपने तेवर मोटे तौर पर प्रगतिशील ही बनाये रखे। पुरुष सुधारकों से उन्होंने अच्छी खासी सामग्री ग्रहण की, लेकिन साथ ही साथ अन्य स्रोतों से भी ऐसी सामग्री लेकर उनका अनुवाद तथा परिष्कार किया जिसमें पारिवारिक तथा शैक्षणिक मामलों में उनकी सक्रिय भागीदारी का पक्ष प्रस्तुत किया गया था। यह सब प्रचलित श्रेणीबद्धता के लिए किसी न किसी रूप में चुनौती थी। अनेक स्त्री प्रधान पत्रिकाओं, खासतौर पर 'चांद' में प्रकाशित अनेक पत्रों में महिलाओं के विचारों और भावनाओं का परोक्ष तथा बचावपूर्ण ढंग से समर्थन किया गया।[45]

एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह है कि औपनिवेशिक उत्तर भारत में शिक्षित महिलाओं के पढ़ने की आदतें कुछ और ही संकेत करती हैं। आप ठोकपीट कर सिलिबस बना सकते थे, पर एक बार शिक्षित हुई महिला के लिए 'क्या पढ़ेगी, क्या नहीं पढ़ेगी' का बंधन लगाये रखना, और वो पढ़ कर अपने ज्ञान का क्या इस्तेमाल करेगी, इसे तय करना बेहद मुश्किल था। शिक्षा प्रायः सार्वजनिक क्षेत्रों में होती थी, पर महिलाओं का पढ़ना प्रायः एक निजी कर्म था, जिसमें उन्हें अपने चुनाव की काफी आजादी मिलती थी। महिलाओं को आखिर कुछ खास पढ़ने या कुछ भी पढ़ने से कैसे रोका जाता! वो मजे ले लेकर कामुक कथाएं, जासूसी उपन्यास, प्रेम कहानियां, नाटक, स्वांग, नौटंकियां और गाने की किताबें पढ़ रही थीं। ये मुख्यतः वही चीजें थीं जिन्हें हिन्दू सुधारवादी महिलाओं से दूर रखना चाहते थे। कुंवारी पढ़ी लिखी लड़कियां कामकलाएं तक पढ़ती थीं। ऐसी किताबों का अपना एक बड़ा बाजार था। इलाहाबाद की प्रसिद्ध आयुर्वेदिक डॉक्टर और 40 से अधिक 'सुधारवादी' किताबों की लेखिका यशोदा देवी का कहना था : *"मैं इस बात को भलीभांति जानती हूं कि किसी पढ़ी लिखी स्त्री का ट्रंक ऐसा न होगा जिसमें एक दो उपन्यास न रखे हों। मेरे यहां इस प्रकार के उपन्यासों के लिए बीसों पत्र आया करते हैं। अगर मैंने ऐसे उपन्यास लिखे होते तो बहुत सा धन अर्जित कर लिया होता... हर रोज स्त्रियां इस प्रकार के चटपटे उपन्यासों के लिए पत्र लिखती हैं। नीतिशास्त्र, धार्मिक शिक्षा और गृह सम्बंधी पुस्तकों को कोई नहीं पूछता... दो चार वर्ष तक मैंने अपनी स्त्री शिक्षा की पुस्तकें माघ मेले में त्रिवेणी तट पर बिक्री के लिए भेजीं... स्त्रियां उन पुस्तकों को देख कर लौट जाती थीं और अनेक प्रकार के रसीले उपन्यास जैसे 'अलबेला गवैया' और 'गजल संग्रह' की मांग करती थीं... जिन दुकानों पर इस प्रकार के उपन्यास और व्यर्थ पुस्तकें आती थीं, उनकी खूब बिक्री हुआ करती थी।"* [46]

ये उपन्यास शायद न बोझिल थे और न ही अपठनीय। ये प्रायः पितृसत्तात्मक मूल्यों से भरे थे, पर इनमें महिलाओं के लिए नैतिक बट्टेदारीकम थी। रोमांस प्रायः रोमांच, यौनिक उत्तेजना और आनंद का सबब था। महिलाओं का उन्हें पढ़ना ही अपने आप में सबसे महत्वपूर्ण क्रिया थी जिसमें प्रतिरोध के बीज छुपे थे। इसलिए हिन्दू प्रचारक महिलाओं के पठन पाठन के बारे में बार बार डरते, संदेह करते थे, उसकी खोजबीन करते थे। वे इस बात पर जोर देते थे कि महिलाओं के लिए पृथक साहित्य की आवश्यकता है, जो उनके अनुकूल लिखा गया हो। एक महत्वपूर्ण पुस्तक में एक सज्जन ने लिखा : *"स्त्रियों तथा पुरुषों की स्वाभाविक अभिरुचि तथा स्वभाव भिन्न भिन्न होता है तथा स्वाभ. ाविक भिन्नता के कारण उनके कर्ताावियों में भी भिन्नता होती है... कुछ सज्जन ऐसे हैं जो तोता मैना*

tadbhav.com home page

की कहानी, अश्लीलता तथा ग्रामीणतापूर्ण स्वांग, नाटक, नौटंकी तथा गाने की पुस्तकें भी महिलाओं के लिए साहित्य की श्रेणी में सम्मिलित कर लेते हैं, परंतु ऐसे मत से हमारा घोर विरोध है... ऐसी पुस्तकें महिलाओं के पढ़ने का हिस्सा नहीं हो सकतीं... हमने स्वयं हाथरस के नाटक स्वांग आदि की अत्यंत दोषपूर्ण पुस्तकों को अनेक देवियों को पढ़ते देखा है।" [47]

विभिन्न प्रकार की किताबों के बीच उपन्यासों को सबसे ज्यादा नशीला बता कर गहरे संदेह की नजर से देखा गया। चिन्ता यह थी कि उपन्यास महिलाओं को प्रदूषित करेंगे और उनमें भ्रष्ट विचारों और रूमानी रुझानों का प्रसार करेंगे। यह सुझाव निहित था कि महिला शिक्षा पूरी तरह शुद्ध, धार्मिक और सांस्कृतिक होनी चाहिए और जिसे विशेषकर चुना जाना चाहिए।[48] उदाहरण के लिए,कम्पनी सेवाकर्मियों के लिए निर्मित फोर्ट विलियम कॉलेज में अंग्रेजों द्वारा एक पाठ्यपुस्तक रूप में संदर्भित राधा और कृष्ण के बीच प्यार का वर्णन करने वाली कहानी की किताब 'प्रेम सागर' को नकारात्मक किताबों की सूची में रखा गया। इस प्रकार की दुश्चिन्ताओं को ढापने के लिए विकास के तर्क भी दिये गये। इस प्रकार महिलाओं को अच्छी पत्नी, अच्छी मां, अच्छा हिन्दू बनाना था। पर इसी में उन्हें 'बुरी पत्नी बुरी मां, बुरी हिन्दू औरत' बनाने का खतरा निहित था। शिक्षा से महिलाओं को न जाने कौन सी ताकत मिल जायेगी, इसे लेकर एक सतत चिन्ता व्याप्त थी। यही द्वंद्व था कि राष्ट्रवादियों और हिन्दू सुधारवादियों ने शिक्षा के महत्व पर जोर दिया, पर उसकी सीमाबंदी भी भरपूर की।

सार संक्षेप में औपनिवेशिक उत्तर भारत में हिन्दू महिला शिक्षा ने पवित्रता और आदर्श महिला की नयी नयी भूमिकाएं और मूर्तियां बनायीं, पर यह भी सच है कि इन सबके बीच महिलाएं भी अपनी जगह बना रहीं थीं। हिन्दू महिलाओं को किस प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए, उसकी दुनिया तंग थी, पर बदन की तंग कमीज की तरह उसकी सिलाईयां उखड़ रही थीं।

संदर्भ

1. Nita Kumar, 'Orange for the Girls, or, the Half Known Story of the Education of Girls in Twentieth Century Banaras', in Nita Kumar, ed., *Women as Subjects: South Asian Histories*, New Delhi, 1994:212.
2. W. Hooper, *Christian Doctrine in Contrast with Hinduism and Islam: Intended for Young Missionaries in North India*, London, 1887; A. M. Robinson, comp., *Weaving Patterns for Eternity: The Wonderful Story of C.E.Z.M.S Industiral Missions*, London, n.d.; Agnes Johnson, comp., *About Signs Following: The Work of C.E.Z.H.S*, London, n.d.; H. Lloyd, *Hindu Women: with Glimpses into their Life and Zenanas*, London, 1882:1-47; Priscilla Chapman, *Hindoo Female Education*, London, 1839:28-30.
3. Emma Raymond Pitman, *Indian Zenana Missions: Their Need, Origin, Objects, Agents, Modes of Working and Results*, London, n.d.:27.
4. Lloyd, *Hindu Women*:47.
5. भारत जीवन, 11 अप्रैल 1892:4; प्रयाग समाचार, 14 अप्रैल 1898; हिन्दी प्रदीप, जनवरी अप्रैल 1909.
6. प्रयाग समाचार, 28 अप्रैल 1898.
7. Antony Copley, *Religions in Conflict: Ideology, Cultural Contact and Conversion in Late-Colonial India*, Delhi, 1997:6.
8. *Aligarh Institute Gazette*, 8 July 1870, *Native Newspaper Reports of UP* (henceforth *NNR*), 1870:271.
9. *Report on the Working of the Local and District Boards in UP, 1909-10*, Allahabad, 1911:5.
10. इसी प्रकार के प्रयास मुस्लिम सुधारवादियों ने भी किये। देखें, Gail Minault, *Secluded Scholars: Women's Education and Muslim Social Reform in Colonial India*, Delhi, 1998.
11. Bishan Narayan Dar, *Signs of the Times*, Lucknow, 1895:62. यह भी देखें, रामदेवी, 'स्त्री शिक्षा', *कायस्थ महिला हितैषी,* 1(9), 11918:15-19.
12. पुरुषोत्तम दास टंडन, 'स्त्री शिक्षा की रीति पर विचार' *गृहलक्ष्मी,* 7 (3), मई-जून 1916:111-13.

13. उद्धृत है, पुरुषोत्तम, *स्त्री भूषण,* बनारस, 1932:2.
14. Malvika Karlekar, 'Women's Nature and the Access to Education', in Karuna Chanana, ed., *Socialisation, Education and Women: Explorations in Gender Identity*, New Delhi, 1988:129-65; Nita Kumar, 'Religion and Ritual in Indian Schools: Banaras from the 1880s to the 1940s', in Nigel Crook, ed., *The Transmission of Knowledge in South Asia: Essays on Education, Religion, History and Politics*, Delhi, 1996:135-54.
15. पुरुषोत्तम, *स्त्री भूषण:* 218.
16. हरी रामचंद्र दिवाकर, 'भारतीय स्त्रियों के विश्वविद्यालय', सरस्वती, 7 (2), अक्टूबर 1916:220.
17. *Annual Report on the Progress of Education in NWP, 1860-61*, Allahabad, 1862:34.
18. *Statistics of British India for 1907-08 and Preceding Years, Part VII, Education*, Calcutta, 1909:16-17; *Statistics of British India, Vol. V, Education, 1919-20*, Calcutta, 1921:238.
19. *General Report on Public Instruction in UP, year ending 31 March 1938*, Allahabad, 1939:34, 36.
20. Annie Besant, *The Education of Indian Girls*, Banaras, 1904:2
21. Butler Papers, Mss. Eur. F. 116/47, 68, Oriental and India Office Collections (henceforth OIOC).
22. उद्धृत है, श्यामकुमार, *स्त्रियों के लिए पृथक साहित्य की आवश्यकता,* आगरा, 1935:88.
23. Joseph Carroll, *Our Missionary Life in India*, Allahabad, 1917:335-340.
24. *General Report on Public Instruction in UP*, *year ending 31 March 1920*, Allahabad, 1920:82.
25. Primary Education for Every Boy and Girl in UP, Allahabad, 1928:25-26; Report on the Working of the Local and District Boards in UP, 1901-02, Allahabad, 1903:3; General Report on Public Instruction in UP, year ending 31 March 1938, Allahabad, 1939:34, 41.
26. श्रीमती शुक्ल, 'स्त्रियां और शिक्षा', *भारतेन्दु,* अक्टूबर 1928:59-60.
27. *भारत जीवन,* 11 अप्रैल 1892:4.
28. गोस्वामी लक्ष्मण आचार्य, *भीषण भविष्य,* इलाहाबाद, 1909:1,92. इसके अलावा देखें, 'स्त्री शिक्षा', गुरुकुल समाचार, 2 (9-10), मई 1910:21.
29. रामानंद सरवती, *नवीन ज्ञान गजरा,* अलीगढ़, 1924:37-8.
30. *व्यंग चित्रावली,* इलाहाबाद, 1930.
31. *क्षत्रिय जाती सुधारक व्याख्यान,* आगरा, 1904:1-4; कृष्णाकुमारी, भारत की विदुषी नारियां, लखनऊ, 1925.
32. उदाहरण के लिए देखें, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', *स्वर्ग की झलक,* इलाहाबाद, 1939.
33. मेहता लज्जाराम शर्मा, *आदर्श हिन्दू,* प्रयाग 1928:72-88.
34. लक्ष्मीनारायण सरोज, *नारी शिक्षा दर्पण,* बनारस, 1929:2,11 यह भी देखें, यशोदा देवी, *पतिव्रता धर्म माला,* इलाहाबाद, 1926:47; उदयनारायण सिंह, 'स्त्री शिक्षा', *कुर्मी क्षत्रिय दिवाकर,* (7), सितम्बर 1925:9-11.
35. महेंदुलाल गर्ग, *कलावती शिक्षा,* प्रयाग, 1930:122.
36. Besant, Education of Indian Girls:5.
37. रामकृष्ण, *स्त्री शिक्षा,* इलाहाबाद, 1874:32; देवी, पतिव्रता:3.
38. विशम्भर प्रकाश, *नारी उपदेश,* मेरठ 1912:14-17.
39. मदनलाल केमका, *स्त्री शास्त्र,* बनारस, 1934:5.
40. कन्हैया लाल, *राष्ट्रीय शिक्षा का इतिहास और उसकी वर्तमान अवस्था,* काशी, 1929:90-1; रामकृष्ण, *स्त्री शिक्षा:7.*
41. चंद्रबली मिश्र, *आदर्श हिन्दू नारी,* बनारस, 1930; गोपाल देवी, *दिव्य देवियां,* प्रयाग, 1926.
42. पुरुषोत्तम, *स्त्री भूषण:*350-1; गुप्त पागल, *गृहिणी भूषण,* काशी, 1921:4-6.
43. *महावीर प्रसाद द्विवेदी रचनावली:खंड 7,* संकलन सम्पादन, भारत यायावर, दिल्ली, 1995:150-1.
44. Nita Kumar, 'Widows, Education and Social Change in Twentieth Century Banaras', EPW, 26(17), 27 April 1991:WS-19-25.
45. Franchesca Orsini, The Hindi Public Sphere 1920-1940: Language and Literature in the Age of Nationalism, Delhi, 2002; Vir Bharat Talwar, 'Femininst Consciousness in Women's Journals in Hindi: 1910-1920', in Kumkum Sangari and Sudesh Vaid, eds, Recasting Women: Essays in Colonial History, New Delhi, 1989:204-232.
46. यशोदा देवी, *दम्पति आरोग्यता, जीवनशास्त्र,* इलाहाबाद, 1927:5-7.
47. श्यामकुमार, *स्त्रियों के लिए पृथक साहित्य:*49,98. ये भी देखें, ओंकारनाथ वाजपेयी, 'सम्पादकीय', *कन्या मनोरंजन,* मई 1924:30; ज्योर्तिमयी ठाकुर, *आदर्श पत्नी,* इलाहाबाद, 1935:9.
48. रामकृष्ण, *स्त्री शिक्षा:* 31-2; गंगा प्रसाद उपाध्याय, *महिला व्यवहार चंद्रिका,* प्रयाग, 1928:28; जी.पी. खन्ना, 'स्त्री शिक्षा', *स्त्री दर्पण,* 33 (4), अप्रैल 1925:84.

tadbhav.com home page